REVIEW OF RESEARCH

वर्तमान समय में कव्वाली का बदलता स्वरूप

Tajinder Singh

Research Scholar , Maharishi Dayanand University, Rohtak and Former Assistant Professor, L.P.U Phagwara, Punjab.

ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514
VOLUME - 8 | ISSUE - 8 | MAY - 2019

प्रस्तावना :—

परिवर्तन संसार का नियम है। एक छोटे बच्चे से लेकर बूढ़े होने तक का सफर, धरती का सूर्य के इर्द-गिर्द घूमना, दिन-रात का होना, धूप-छांव का होना, भिन्न- भिन्न मौसमों का आना-जाना यह सभी प्रकृति के इसी नियम के अंतर्गत आते हैं। कहा जाता है कि तेज हवा के आने पर जो पेड़ हवा के रूख के साथ आना रूख नहीं बदलता वह जल्दी ही धरती पर गिर जाता है। ठीक उसी प्रकार संगीत में भी बदलाव हो रहा है। एक स्वर से 7 स्वरों तक का सफर, जाति-गायन, मुर्छना पद्वति से लेकर राग-थाट पद्वति तक का सफर, ध्रुपदधमार गायन शैलियों से आधुनिक ख्याल, गज़ल, कव्वाली तक का सफर इत्यादि यह सभी कुदरत के इसी नियम के अंतर्गत आते हैं।

Key words – सूफी, संगीत, कव्वाली, बदलाव I

बदलाव के इसी नियम के अंतर्गत कव्वाली गायन शैली भी आती है। जिसमें शुरू से लेकर अब बदलाव के कई पड़ावों से होकर गुजरना पड़ा। जिस प्रकार जिस पत्थर पर पानी सबसे अधिक चोट पड़ती है, वह सबसे अधिक गोल और मुलायम बनता है। ठीक उसी प्रकार ही कव्वाली अपने सफर में बहुत से पड़ावों से गुजर कर आज एक नए अंदाज के साथ बहुत ही ऊंचे मुकाम पर है। जिन मुख्य पांच कारणों से कव्वाली स्वरूप में बदलाव आए वह इस प्रकार हैं I

1. साहित्यिक दृष्टिकोण से कव्वाली में आए बदलाव I
2. संगीतिक परिपेक्ष में कव्वाली में आए बदलाव I
3. व्यावसायिक कारणों से कव्वाली में आए बदलाव I
4. श्रोताओं की रूचि अनुसार कव्वाली में आए बदलाव I
5. प्रस्तुतिकरण परिपेक्ष से कव्वाली में आए बदलाव I

साहित्यिक दृष्टिकोण से कव्वाली में आए बदलाव :- साहित्य का संबंध किसी विशेष स्थान तथा वहां की भाषा से होता है। जिस प्रकार अलग-अलग क्षेत्रों तथा देशों का खान-पान अलग-अलग होता है तथा वह खान-पान जिस भी क्षेत्र का हो उसी क्षेद्ध में अधिक अच्छा लगता है, ठीक उसी प्रकार किसी विशेष क्षेत्र एवं स्थान के साहित्य का आनंद जो वहां के लोग अपनी मातृ भाषा में ले सकते हैं वह किसी अन्य भषा में उतना आनंद नहीं ले पाते। जैसे पंजाब के किसी आम व्यक्ति को मौलाना रूमी का लिखा हुआ फारसी शेयर "ना मन बेहुदा गिरदे कुचा-ओ-बाज़ार मी गरदम" सुनाया जाए तो वह चाह

LBP PUBLICATION

कर भी इसे उतनी आसानी से समझ नहीं पाएगा। हां, अगर फारसी भाषा के स्थान पर उसे उसी की भाषा में कोई शेयर अथवा गीत सुनाया जाए तो अवश्य शेयर अथवा गीत के साहित्य का आनंद भ्ज्ञी ले सकेगा। कव्वाली के साहित्य में आए बदलाव का सबसे पहला करण भी यही है।

कव्वाली मूल रूप से अरबी तथा फारसी गायन शैली है। शुरू में इसके गायन का अंदाज कैसा रहा होगा, इस विषय में कोई ठोस तर्क तो प्राप्त नहीं होता परंतु इसकी भाषा शुरू में अरबी तथा फारसी ही थ्ज्ञी। इसके बहुत से परिणाम आज भी मौजूद हैं। इस तथ्य का परिणाम हले भी दिया जा चुका है। जब मुस्लमान गायक भारत में आए तो उन्हें केवल अपनी मातृ भाषा अरबी तथा फारसी का ही ज्ञान था परंतु भारत में आने के पश्चात ही उन्होंने यहां की भाषा सीखी तथा उसी से ही भारत में कुछ नई भाषाओं का आगमन हुआ। जिससे गायन शैलियों के साहित्य की भाषा में भी बदलावा आया होगा। जो कव्वाली पहले अरबी तथा फारसी भाषा में होती थी वही कव्वाली भारत में आने के पश्चात अरबी-फारसी भाषाओं के साथ-साथ उर्दू, हिन्दी तथा पंजाबी भाषा में भी होने लगी।

समय के साथ-साथ जहां एक तरफ इन नई भाषाओं में कई प्रकार के बदलावा आए दूसरी ओर उस समय के शायरों, कवियों को नए क्षेत्र के अनुसार बहुत से नए विषयों पर नए ढंग से लिखने का मौका भी मिला। इसी समय दौरान बहुत सी शायरी, साहित्य जोकि उस समय के अनुकूल थी आदि कव्वालों को मिली। उदाहरण के लिए जैसे पहले समय की कव्वाली के साहित्य में केवल इश्क की ही शायरी होती थी वो भी खुदा से इश्क तथा मुरश्द से इश्क की शायरी, परंतु नए विषयों में इश्क-ए-मज़ाजी का साहित्य भी लिखा जाने लगा। इसी समय के दौरान हीर वारिस शाह, किस्सा-सैफ मलूक इत्यादि लिखे गए। यही कव्वाली के साहित्य में आए बदलाव का दूसरा कारण है।

आधुनिक समय में कव्वाली के साहित्य में आए बदलाव के **2** मुख्य कारण हैं **:-** पहला भारत का बंटवारा और दूसरा भूमंडलीकरण। भारत के बंटवारे से पहले पंजाब के लगभग सभी घरों में चाहे वह किसी भी धर्म से संबंधित हेाता था, उर्दू भाषा का प्रयोग अधिक किया जाता था। जिससे घर के सभी सदस्यों को उर्दू तथा इसके साथ मिलती भाषा फारसी का ज्ञान होता था तथा कव्वाली द्वारा गाई जाने वाली सभी कव्वालियां आम लोग आसानी से समझ लेते थे परंतु बंटवारे के पश्चात आधुनिक पंजाब में उर्दू का स्थान पंजाबी ने ले लिया। जिसके कारण उर्दू में गाई गई कव्वाली आम लोगों की समझ से बाहर होती जा रही है। दूसरा बदलाव जो भूमंडलीकरण की वजह से है। आधुनिक समय कम्प्यूटर तथा मोबाइल का जमाना है। भूमंडलीकरण की वजह से आज पंजाब ही नहीं अपितु पूरे भारत की सभी भाषाओं पर अंग्रेजी भाषा का प्रभाव बहुत ही अधिक देखने को मिलता है। आज हम अपने परिवार, दोस्त या अन्य किसी भी व्यक्ति से बात करते समय **10** में से **4** अथवा **5** शब्द अंग्रेजी भाषा के प्रयोग करते हैं। कभी-कभी तो इससे भी अधिक, परिणामस्वरूप हम हमारी मातृ भाषा के बहुत से शब्द जो अपने-आप में बहुत ही गहरे अर्थ समेटे हुए होते हैं वो जाने-अनजाने में भूल रहे हैं। इन सभी कारणों का असर शायर के दिल और दिमाग पर बहुत गहराई से होता है। एक अपने आस-पास के माहौल को देखकर ही शायरी लिखता है तथा उसकी शायरी का असर फिर आम लोगों तक पहुंचता है।

आधुनिक समय कम्प्यूटर एवं मोबाइल का समय है। एक समय था जब बच्चे अपने घर के बड़े-बुजुर्गों के पास बैठकर कहानियां सुना करते थे। घ्ज्ञक्र के बड़े सदस्य बातों ही बातों में कहानियों के माध्यम से अपने बच्चों को अपना इतिहास, किस्से एवं जिन्दगी के तजुर्बे सिखा देते थे। जिससे छोटी उम्र से ही

बच्चों को बहुत सारी बातों तथा अपनी पुरानी सभ्यता के बारे में ज्ञान हो जाता था। आधुनिक समय में बच्चे अपने बुजुर्गों के पास बैठकर इन सभी बातों को सुनने-समझने की जगह वह सारा समय अपने मोबाइ एवं इंटरनैट इत्यादि को देते हैं। इस प्रकार वह अपनी सभ्यता से बहुत दूर जा रहे हैं। फलस्वरूप न तो उन्हें अपनी भाषा का पूर्ण ज्ञान हो पात है और न ही अपनी सभ्यता का, जिसकी वजह से वह साहित्य का पूर्ण रूप से आनंद नहीं ले पाते। जैसे नुसरत फतेह अली खां की एक कव्वाली में दो पंक्तियां आती हैं ।

"भावे अट्टी मुल विक्क
भावे फूक चरा
रब्ब मन जांदा
यार नू मनाऊणा ओखा ऐ।"

इन पंक्तियों में 'अट्टी मुल विक्क' कोई एक अर्थ का शब्द नहीं बल्कि इन तीन शब्दों के पीछे 'युसूफ-जुलैखां' का पूरा किस्सा छिपा हुआ है। बात सिर्फ इतनी है कि जिसको 'युसूफ-जुलैखां' के किस्से के बारे में पता होगा वह तो इन पंक्तियों को सुनते ही वाह-वाह कर उठेगा तथा यह आनंद किस तरह सुकूनदायक होगा, इसको शब्दों में बयां करना बहुत ही कठिन है परंतु जिसको 'युसूफ-जुलैखां' के बारे में कुछ पता ही नहीं हो उसके लिए तो मानों यह एक बेअर्थ से शब्द ही होंगे।

संगीतिक परिपेक्ष से कव्वाली में आए बदलाव :-

संगीतिक परिपेक्ष से कव्वाली में अब तक कई प्रकार के बदलाव आए हैं। शुरू में कव्वाली डफ के साथ ही गाई जाती थी परंतु जब कव्वाली अरब एवं ईराक देशों से निकलकर भारत आई तो सूफी संतों ने यह देखा कि भारत के लोग संगीत प्रेमी हैं, तब उन्होंने इसे एक नए अंदाज में पेश किया। मुस्लमान गायकों ने कव्वाली को भारतीय रागों में बांधकर गाना शुरू किया, जिसे यहां के लोगों द्वारा बहुत ही पसंद किया गया। समय के साथ-साथ जैसे-जैसे मुस्लमान गायकों ने भारतीय राग परम्परा तथा यहां के संगीत में निपुणता हासिल की, वैसे-वैसे कव्वाली भी शास्त्रीय अंग अर्थात विभिन्न रागों में गाई जाने लगी। उस समय के प्रचलित वाद्य जैसे सारंगी, तबला इत्यादि कव्वाली में संगत के रूप में प्रयोग किया जाने लगा। अंग्रेजों के भारत आगमन के साथ ही हारमोनियम का भी भारत में प्रयोग हुआ। धीरे-धीरे सारंगी की जगह हारमोनियम ने ले ली, जिससे कव्वाली को गाने में भी काफी सुविधा मिलने लगी। इंगलिश संगीत के प्रभाव के चलते भारत तथा पाकिस्तान में बहुत से कव्वाल गायकों ने शास्त्रीय अंग की कव्वाली के साथ-साथ कुछ हल्की धुनें, जिसे आम लोग आसानी से गा सकें, बनानी शुरू कीं। ऐसी धुनों को आग लोगों की तरफ से बहुत सराहा गया, फलस्वरूप कव्वाली शास्त्रीय रागों की बंदिशों से निकल कर अपने नए अंग में गाई जाने लगी। कव्वाली में इस प्रकार के प्रयोगों के लिए उस्ताद नुसरत फतेह अली खां, उस्ताद बदर मीयां दाद, उस्ताद मुहम्मद शरीफ कव्वालों के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

उस्ताद नुसरत फतेह अली खां इस विषय पर बात करते हुए अपने साक्षात्कार में कहते हैं कि मेरा जो अंदाज था वो रिवायती अंदाज था। हम अपनी सभ्यता एवं जड़ों को बढ़ाने व उसे कायम रखने के लिए पश्चिमी संगीत का सहारा ले रहे हैं। 1

संगीतिक परिपेक्ष से बदलाव के अंतर्गत **2** मुख्य रूपों से बदलाव सामने आते हैं, एक तो कव्वाली की धुनों को गाने के अंदाज से तथा दूसरा पश्चिमी साजों जैसे हारमोनियम, की-बोर्ड, ओक्टोपैड इत्यादि। इन सभी साज़ों के अतिरिक्त आधुनिक यसमय में कुछेक कव्वाल पार्टियां अपने मंच प्रदर्शन के समय ढोल का प्रयोग भी करते हैं।

व्यावसायिक कारणों से कव्वाली में आए बदलाव :-

पहले पहल कव्वाली को केवल अल्लाह की शान, मुरशद की तारीफ इत्यादि के लिए ही गाया जाता था। जिसका मुख्य मकसद खुदा की बंदगी ही होता था। उस समय कव्वाली गायन करने के लिए कोई विशेष गायक तो नहीं होते थे अपितु सूफी संत-फकीर अपने मुरीदों में से किसी भी मुरीद को कलाम पढ़ने के लिए कह दिया करते थे।[1] उस समय कव्वाली को व्यवसाय के साथ अथवा पैसा कमाने के लिए नहीं अपितु केवल और केवल मुरशद की शान एवं बंदगी के लिए ही गाया जाता था। धीरे-धीरे इन्हीं मुरीदों में से कुछेक ने कव्वाली गायन को ही अपना मुख्य कार्य अर्थात अपने मुरशद की सेवा रूप में, बना लिया। वह मुरीद अपने मुरशद के हुकम से कलामों को पढ़ते थे, जिसे वह पैसों के लिए नहीं अपितु मुरशद के हुकम से उनकी सेवा के लिए तथा उनकी खुशी के लिए गाते थे। इस तरह के कव्वाल आधुनिक समय में भी होते थे, जिन्हें पगड़ीधारी गायक कहा जाता है।

दरगाहों पर कव्वाली करने वाले इन मुरीद कव्वालों को जब किसी अन्य जगह पर कव्वाली करने के लिए बुलाया जाता था तो इन्हें सम्मान के रूप में कुछ पैसा और उपहार रूप में कुछेक वस्तुएं भेंट की जाने लगीं। समय के साथ जैसे-जैसे कव्वाली गायन की मांग बढ़ती गई तो बहुत सारे कव्वाल गायकों ने कव्वाली गायन को ही अपना पेशा बना लिया। जिससे कव्वाली बंदगी करने के साथ-साथ पैसा कमाने साधन भी बन गया। जिससे कव्वालों में बहुत से बदलाव आने शुरू हो गए। इन्हीं बदलावों के अंतर्गत कव्वाली के सदस्यों की संख्या में भी कमी आनी शुरू हो गई तथा एक दिन में एक कव्वाली महफिल की जगह **6-6** कव्वाली की महफिलें भी की जाने लगीं। सीजन के दिनों में हमें कई दिनों तक नींद नसीब नहीं होती। अगर होती है तो वो बाड़ी में सफर के समय जितनी।[2]

इन बदलावों को मुख्य रूप से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है ।

- **सदस्यों की संख्या में आए बदलाव**
- **कव्वाली महफिल के समय में आए बदलाव**

सदस्यों की संख्या में आए बदलाव :-

साधारणतया कव्वाली पार्टी में **9** से **14** सदस्य होते थे, जिनमें उनके काम के अनुसार बैठने की जगह निर्धारित होती थी। इनका काम इस प्रकार होता था ।

- मुख्य गायक - **1**
- हारमोनियम वादक- **2**
- शेयर व आवाज़ लगाने वाले- **2** से **3**

- तबला वादक- **1**
- ताली तथा पीछे बोलने वाले- **4** से **6**
- शायरी एवं कलाम बोलने वाले- **1**
- अन्य साजिंदे जैसे ढोलक, सारंगी वाले- **1** से **2**

यही रिवायत सदियों से कव्वाली में चलती आ रही है। इस संख्या में वाली कव्वाली पार्टी के सदस्य अपने कार्य में पूर्ण रूप से माहिर होते थे। वह सुनने वालों को गायकी के हर पक्ष से संतुष्ट करवाते थे। साथ ही सुनने वाले भी इस कदर दीवाने होते थे कि कव्वाली की महफिलें **1-2** घंटे नहीं अपितु रात-रात भर तथा कई स्थानों में यह महफिलें कई-कई दिनों तक चलती थीं। आज के समय में कव्वाली की महफिल **1-2** या अधिक से अधिक **3** घंटे की होती है तथा **2-3** घंटों की महिफल के लिए फिर इतने सदस्यों को लेकर जाना उतनी उचित नहंी लगती क्योंकि समय गायन तो **6-7** सदस्य भी आराम से कर लेते हैं। दूसरा कम सदस्यों से हिस्सा (पैसों का हिस्सा) भी सही-सही आ जाता है।[3]

समय में आए बदलाव :-

आज की भागदौड़ भरी जिन्दगी में किसी के पास भी इतना समय नहंी होता कि वह पूरी -पूरी रात बैठकर महफिलें सुनें। दूसरा कव्वालों के पास भी समय की कमी रहती है क्योंकि उन्होंने एक दिन में कई-कई महफिलों में अपना गायन प्रस्तुत करना होता है। असलियत में कव्वल गायकों की कव्वाली महफिलें अधिकतर जेठ-हाड़ के महीने में ही होती हैं। इन्हीं दिनों से कमाए हुए पैसों से वह अपने परिवार का पूरे वर्ष तक खर्च चलाते हैं, जिसकी वजह से उन्हें एक दिन में एक से अधिक महफिलें करनी पड़ती हैं। शेष **8** महीनों में कव्वाली की महफिलें बहुत कम हो जाती हैं।

इन्हीं कारणों की वजह से कव्वाली की महफिलों का समय कम हो गया। महफिलों के समय में कमी का मतलब यहां यह नहीं कि **2-3** घंटे में महफिल खत्म हो जाती है। महफिल तो सारी रात एवं दिन भर भी चलती है परंतु सारी रात एवं दिन में कोई एक कव्वाली सारी महफिल में नहीं गाता अपितु रात भर गायन के लिए **5-6** कव्वालों को समय दिया जाता है।

श्रोताओं की रूचि के अनुसार कव्वाली में आए बदलाव :-

पंजाबी कव्वाली के उत्साद एवं बुजुर्ग कव्वाल उस्ताद करामत फकीर कहते हैं कि हमने अपने जीवन की शुरूआती महफिलों में यह देखा था कि सुनने वाले प्रत्येक शेयर को सुनकर वाह-वाह कर उठते थे क्योंकि उनको शायरी तथा पुरानी बातों के बारे में पता था परंतु आज की महफिल में अगर हम कोई गहरी रमज़ वाला शेयर गाते हैं तो वह कुछेक लोगों की ही समझ तक सीमित रह जाता है।[4]

करामत जी के इस तथ्य से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि आधुनिक समय के श्रोतागण में असल बात सुनेन की इच्छा नहीं होती क्योंकि उन्हें अपनी पुरातन विरासत के बारे में जानकारी न के बराबर ही होती है।

उस्ताद नुसरत फतेह अली खां जी अपने एक साक्षात्कार में कहते हैं कि आजकल के नौजवानों को नहीं पता कि हीर-वारिस शाह कौन हैं? सस्सी-पुन्नू कौन हैं। मीयां मुहम्मद बख्श कौन हैं? जिन्होंने अपनी

सभ्यता को पढ़ा-सुना ही नहीं, अपने बुजुर्गों की संगत नहीं की, जो शुरू से ही अंग्रेजी संगीत सुनते आ रहे हैं। अगर हम अपना संगीत, अपने ढंग से सुनाएंगे तो उसने बर्दाश्त नहीं होगा।[5]

इन तथ्यों से यह बात पूर्ण रूप से स्पष्ट हो जाती है कि श्रोताओं को अपनी सभ्यता एवं विरासत के बारे में जानकारी न होने के कारण कव्वाल गायक विरसम के बारे में जानकारी न होने के कारण कव्वाल गायक पुरानी रिवायती कलाम नहीं सुना पाते।

इसके अलावा आज की भागदौड़ भरी जिन्दगी में लोगों की मानसिक स्थिति भी चंचल किस्म की हो चुकी है, जिससे वह आरफाना तथा ठहराव वाली चीजें सुनने में अधिक रूचि नहीं दिखाते। कुलदीप कादिर इस विषय में कहते हैं कि आज की महफिलों में ज्यादातर एक ही मांग होती है कि अधिक लय वाली कव्वाली गाकर श्रोताओं को नचाना। जो कव्वाल जितने अधिक श्रोताओं को कव्वाली में नचाता है उसकी मांग उतनी अधिक होती है।[6]

प्रस्तुतिकरण के परिपेक्ष से कव्वाली में आए बदलाव :-

कव्वाली के प्रस्तुतिकरण के परिपेक्ष अर्थात मंच प्रदर्शन के आधार पर हुत तरह के बदलाव आए हैं। इन बदलावों को **2** मुख्य भागों में विभाजित किया जा सकता है।

- . कव्वाली के असूलों में आए बदलाव
- वाद्यों के प्रयोग में आए बदलाव

कव्वाली के असूलों में आए बदलाव

प्राचीन समय में कव्वाली गायन से पहले कुछ विशेष बातों का ध्यान रख जाता था। जिनके मुकम्मल होने के बाद ही महफिल शुरू की जाती है।[7] इन नियमों को कव्वाली के असूलों एवं कायदे भी कहा जाता था। यह नियम इस प्रकार हैं।

1. कव्वाली गाने वाले कव्वाल गायक व उनके साथी तथा महफिल में उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति बा-बुज़ु होना चाहिए।

2. महफिल में कोई बच्चा एवं औरत नहीं होनी चाहिए।

3. महफिल के शुरू होने के बाद कोई भी व्यक्ति महफिल के बीच में उठना, जब तक कव्वालों द्वारा महफिल की समाप्ति कर न कर दी जाए।

4. महफिल में किसी भी तरह का खाना-पीना अथवा नशीली वस्तुओं के सेवन पर पूर्ण रूप से मनाही होती थी।[8]

आधुनिक समय में इन सभी नियमों का पालन लगभग न के बराबर ही होता है। गुलाम अली ने बाताया कि यू.पी. में कुछेक महफिलें आज भी ऐसी हैं जिनमें इन सभी नियमों की पूरी तरह से पालना की जाती है।[9]

वाद्यों के प्रयोग में आए बदलाव

कव्वाली अपने शुरूआती दौर में केवल डफ के साथ ही गाई जाती थी। जैसे ही कव्वाली गायन का आगमन भारत में हुआ तो इसमें भारतीय गायन शैली तथा यहां के साज़ों का भी प्रयोग किया जाने लगा। जो

कव्वली पहले केवल डफ के साथ गाई जाती थी भारत में आने के पश्चात इसमें सारंगी, सितार, तबला इत्यादि साज़ भी शामिल हो गए।

अंग्रेजी सभ्यता के प्रभाव के कारण सारंगी, सितार जैसे स्वर वाद्यों की जगह हारमोनियम के साथ की-बोर्ड, गिटार का भी प्रयोग किया जाने लगा है। लय वाद्य में तबले की जगह आज भी वही है जो पहले के समय में थी। तबले के साथ-साथ आज कव्वाली में लय वाद्य के लिए ओकोटोपैड, ढोलक इत्यादि साज़ों का प्रयोग होना एक आम सी बात हो चुकी हैं ।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. शौकत अली दीवाना (कव्वाल) से किया साक्षात्कार, 21 सितम्बर 2018 , पटियाला
2. गुलाम अली, (कव्वाल) से किया साक्षात्कार, 21 सितम्बर 2018, मालेरकोटला
3. वही
4. करामत फकीर (कव्वाल) से किया साक्षात्कार, 21 सितम्बर 2018, मालेरकोटला
5. https://www.youtube.com/watch?v=WY6QwS2epgE
6. कुलदीप कादिर, (कव्वाल) से किया साक्षात्कार, 13 अप्रैल 2018, गोहावर
7. गुलाम अली, (कव्वाल) से किया साक्षात्कार, 21 सितम्बर 2018, मालेरकोटला
8. वही
9. वही

Tajinder Singh
Research Scholar , Maharishi Dayanand University, Rohtak and Former Assistant Professor, L.P.U Phagwara, Punjab.

LBP PUBLICATION